JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में राजनीतिक जीवन यथार्थ (1990 से 2010 तक)

हवासिंह यादव
हिन्दी विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर

सार–संक्षेप

20वीं सदी के अन्तिम दशक एवं 21वीं सदी के प्रथम दशक का राजनीतिक जीवन की यथार्थता का परिवर्तित रूप हिन्दी उपन्यासों में परिलक्षित होता है। इन दशकों की राजनीति अपने सिद्धांतो से हट चुकी है। इन दशकों की राजनीति में अनुशासनहिन, भ्रष्टाचार से व्याप्त, स्वार्थी राजनेताओं के प्रवेश से भटक चुकी थी। राजनीतिक यथार्थता में भ्रष्टाचार, नौकरशाही, सांप्रदायिकता, आरक्षण, राजनेताओं के घोटाले, राजनेताओं की हत्याएँ, बढता हुआ आतंकवाद, राजनीति में अपराधीकरण, राजनीति में कुविख्यात व्यक्तियों का प्रवेश आदि का समावेश होता दिखाई देता है। देश के भविष्य और आम आदमी के हितों के प्रति वे हमेशा लापरवाह रहते हैं। स्वतंत्रता के पश्चात् तो राजनीतिज्ञों के लिए राजनीति देश सेवा का साधन न रहकर उनका व्यवसाय बन गया है। राजनैतिक परिवेश का हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों पर प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष प्रभाव परिलक्षित होता है।

परिचय

साहित्य और राजनीति का संबंध सदा से रहा है। क्योंकि इन दोनों का केन्द्र बिन्दु समाज है। साहित्य और राजनीति का मुख्य उद्देश्य समाज को आनन्द प्रदान करना है। साहित्य ने अपनी अनुभूति के दायरे में रहकर समाज के राजनीतिक पहलुओं की अभिव्यक्ति एवं कल्पना से समाज पर अपना अमिट प्रभाव डाला है। ऐसा करके साहित्य ने विश्व का नक्शा ही बदल दिया है। राजनीति के दुष्चक्र में पिसकर कराहती और विद्रोह करने के लिए उतारू आम जनता की छवी को आइने के समान साहित्य प्रतिबिम्बित करता है। राजनीति साहित्य से अलग होकर नहीं रह सकती अगर रहे भी तो वह अपना आदर्श को खो देगी, क्योंकि उस आदर्श में जन जीवन का हित निहित है। आधुनिक युग में राजनीति का पटल विस्तृत हो गया है। वह केवल स्वदेश में ही नही, संपूर्ण विश्व से प्रभावित है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में राजनीति उपस्थित है। समाज के आम आदमी से लेकर चोटी पर विराजमान व्यक्ति तक राजनीति के चक्र–कुचक्र से बच नहीं सकते।

वर्तमान युग राजनीति का युग है। समाज एवं व्यक्ति के विकास में राजनीति का अधिक प्रभाव होने के कारण समाज का प्रत्येक व्यक्ति राजनीति के साथ जुड़ा है। देश की चुनावी राजनीति व्यक्ति को महत्त्व प्रदान करती है। राजनीति पर अनुशासनहीनता, अराजकता और भ्रष्टाचार के आरोप का तथ्यात्मक पक्ष का विश्लेषण करते हुए गोपालराय का कथन दृष्टव्य है कि "संसद और विधान सभाओं में चुनाव जीतने के लिए पैसे का महत्त्व बढ़ता गया और इसके साथ–साथ सामंतों, जमींदारों, भूमीपतियों और पूँजीपतियों का शासन तंत्र पर प्रभाव भी बढ़ता गया। इसी के अनुपात में आर्थिक भ्रष्टाचार में भी वृद्धि हुई। संप्रदायवाद एवं क्षेत्रीयतावाद और इनसे जुड़े षड्यंत्रों का तो प्रवेश राजनीति में हुआ ही, सत्ता बनाए रखने के लिए चरित्रहीन सांसदों को रिश्वत भी दी जाने लगी। आज तो रिश्वतखोर, तस्कर, डकैत, आर्थिक घोटाला करने वाले, सत्ता का दुरूपयोग करके धन जमा करने वाले, करोड़ों का आयकर हड़प जाने वाले सभी प्रकार के अपराधी राजनीति पर काबिज हो गए हैं।"[1] प्रस्तुत उद्धरण से विदित होता है कि आम जनता की चुनाव में स्वार्थी प्रवृत्ति चरित्रहीन नेताओं का चुनाव करने में सहायक होती है। इस कारण सत्ता में आने वाले राजनीतिक दल स्वार्थी और अवसरवादिता की सीमाएँ तोड़ते दृष्टिगोचर होते हैं। इन लेखिकाओं के उपन्यासों में राजनीतिक जीवन यर्थाथ इस प्रकार हैः–

साम्प्रदायिकता का प्रभाव

साम्प्रदायिकता के कारण भारत देश की राजनीति में उत्थान–पतन की अवस्था दृष्टिगोचर होती है। विभिन्न राजनीतिक पार्टियाँ एवं राजनेता साम्प्रदायिकता को बढावा देकर स्वार्थ सिद्धि में किस प्रकार लिप्त है, इस बात को लेखिकाओं ने हिन्दी उपन्यासों के माध्यम से स्पष्ट किया है। महिला लेखिकाओं ने हिन्दी उपन्यासों में राजनेताओं के दोगले व्यक्तित्व को स्पष्ट करते हुए साम्प्रदायिकता के कारणों को खोजने का प्रयास किया है। मैत्रेयी पुष्पा ने इदन्नमम उपन्यास में राजनीतिक जीवन की यथार्थता को स्पष्ट करते राजनीति के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव को दर्शाया है। प्रस्तुत उपन्यास में साम्प्रदायिक दंगो की भयावह स्थिति को उजागर करते हुए साम्प्रदायिकता के कारण नारी की होने वाली दुर्दशा को अभिव्यक्त किया है। इन दशकों के राजनीतिक नेताओं का व्यक्तित्व स्वार्थी, आदर्शाहीन हो जाने के कारण जनता का विश्वास उठ चुका था। इस बात को इदन्नमम उपन्यास में सोनपुरा के लोगों द्वारा स्पष्ट किया है, वे कहते है, "सिरकारी लोगो से, नेताओं से और मंतरी–संतरियों पर से अब हमारा विश्वास हट्ट गया है, सो सौ बातों की एक बात कह देते हैं, चाहे आज कह लो, चाहे कल कि अब की बार हम वोट डालने जायेंगे ही नहीं। ऐन हमारे द्वारे पर मोंटर क्या, जहाज लगाये खडे रहना ससुर जू।"[2] इस वक्तव्य से सामान्य जनता का राजनेताओं के प्रति दृष्टिकोण उजागर होता है। सांप्रदायिक दंगों में समाज के निरपराध लोगों की हत्या और गुंडागर्दी करने वाले लोगों द्वारा लूटपाट करना आम चित्र बन गया है। भारत में गुजरात राज्य के गोधरा में हुए सांप्रदायिक दंगों पर प्रस्तुत काल के उपन्यासों में विचार–विमर्श किया है। मैत्रेयी पुष्पा के 'कहीं ईसुरी फाग' उपन्यास में माधव मामा की सलाह से अहमदाबाद पहुँचता है। गुजरात के गोधरा में सांप्रदायिक दंगों का उन्माद चला था। ऋतु के मतानुसार माधव ने इस दंगों का यथार्थ चित्रण करना चाहिए ताकि दंगों के पीछे की घिनौनी राजनीति सामने आ जाती थी। मगर माधव ने मामा की सलाह से कारसेवकों और हिंदुत्ववादी शक्तियों का साथ दिया था। ऋतु को माधव का सच्चाई से पलायन करना दुख पहुँचाता है।[3]

चित्रा मुद्गल के 'आवां' उपन्यास में आधुनिक समाज की सांप्रदायिक एवं भ्रष्ट राजनीति में आम जनता की दुर्गति, संघर्ष और यातना का स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत किया है। श्रमिक संगठन का चित्रण करते हुए नेता लोगों के व्यक्तिगत आचरणों से लेकर उनके कलह, अपराध, आतंक, शोषण, झगडे और कथनी और करनी में होने वाले अंतर आदि का

चित्रण किया गया है। इसके साथ–साथ चित्रा जी ने आज के नेताओं की चारित्रिक दुर्बलताओं, दोहरे चरित्र तथा अवसर वादिता, स्वार्थ सिद्धि आदि को भी चित्रित करने में सफल हुई है। समाज में होने वाले बेईमानी, साम्प्रदायिक भावनाएँ और हडताल आदि को भी दिखाया है।

अलका सरावगी ने सन् 1942 के विवरणात्मक चित्रण के साथ–साथ साम्प्रदायिक एकता और समाजवादी विचारधारा के प्रतिपादन का प्रयास किया है। जिससे अनेक राजनीतिक समस्याओं को लेकर प्रश्न स्पष्ट रूप से उभर आए हैं। सन् 1942 की क्रान्ति के विविध साम्प्रदायिक पहलुओं एवं पक्षों की विवेचना लेखिका ने अत्यन्त मार्मिक ढंग से प्रस्तुत की है। 'कलिकथा वाया बाईपास' उपन्यास में लेखिका ने सन् 1942 की परिस्थितयों को प्रस्तुत किया गया है।[4] अलका सरवगी का 'कोई बात नहीं' उपन्यास में देवीदत्त मामा की तरह जतीन दा हैं जो ऐसे लोगों में रहे हैं कि जो यह मानते थे कि एक दिन ऐसी साम्प्रदायिक कान्ति होगी कि सारे भेद खत्म हो जाएंगे लेकिन– "अचानक सबके रास्ते अलग–अलग हो गए। ...पूरी दुनिया के इतिहास में यह ऐसा समय था, जब अलग–अलग देशों के लोग अपनी–अपनी धरती को इसी तरह खुन के लाल रंग से रंगने को तैयार थे।"[5]

सन् 1947 में तत्कालीन भारत को दो स्वतंत्र इकाईयों– भारत तथा पाकिस्तान में बांटना एक राजनैतिक निर्णय था, जिसके फलस्वरूप दोनों देशों में साम्प्रदायिक वैमनस्य तो बढ़ा ही, अपितु कई राजनैतिक तथा आर्थिक समस्याएं भी उत्पन्न हुई। महात्मा गांधी ने बार–बार यह कहा था कि– "देश का बंटवारा उन के शव से ही होगा"[6] अब उन्होंने भी अपने मुख्य शिष्यों के अनुनय विनय पर निराशा तथा असहायता के सामने सिर झुका दिया और विभाजन स्वीकार कर दिया। अलका सरावगी भारत देश की एक जागरूक कथाकार हैं। स्वतंत्रता प्रप्ति के बाद देश में विभिन्न समस्याओं पर उन्होंने अपनी पैनी दृष्टि रखी है। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान व स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की राजनीतिक घटनाओं व हलचलों का वर्णन पात्रों के माध्यम से कराते हुए अपने पाठकों को अवगत कराया है। जैसे उपन्यास 'कलिकथा' में देश की स्वतंत्रता के बारे में बताया गया है।[7]

राजनीतिक गुंडागर्दी और भ्रष्टाचार

राजनीति गुंडागर्दी और भ्रष्टाचार का प्रमुख केंद्र बनी है। राजनेताओं की समाज सेवा की भावना तिरोहित हो गई है। 'कथांतर' उपन्यास की मणि अपनी समाजसेवा में व्यस्त मालकिन सविता से बिनती करती है कि अपने बेटे पलाश का किसी विद्यालय में दाखिला करा दे। सविता मणि को सलाह देती है कि "पलाश पढ़ाई कर क्या बनेगा? इससे बेहतर है अपने साथ यही छोटे कामों के लिए उसे ले आना"।[8] इससे सविता के समाज सेवा की असलीयत उजागर होती है। अलका सरावगी का 'कोई बात नहीं' उपन्यास में शशांक की दादी शशांक को मिथक कथा के माध्यम से नेताओं के भ्रष्टाचार की सीमाहिन दौड़ के बारे में समझाती है कि "कलयुग में सारे पंच–सरपंच, वकील–जज, राजा–मंत्री–सिपाही इस दोमुंहे भैसे जैसे होंगे। वे वादी–प्रतिवादी दोनों पक्षों का गला काटेंगे, पर उनका पेट कभी नहीं भरेगा। वे पूरा का–पूरा राज उजाड़ देंगे, पर रहेंगे भूखे के भूखे।"[9] प्रस्तुत कथन राजनीति के भ्रष्टाचार का स्वरूप स्पष्ट करता है।

अलका सरावगी का 'शेष कादम्बरी' उपन्यास में देवीदत्त मामा का पागलों की तरह गांधीजी के पीछे–पीछे रहना और गांधीजी की मृत्यु को अस्वीकार करना इस बात का उदाहरण है कि देश में चाहे कितना भ्रष्टाचार क्यों न हो, गांधी

जी जैसे देशप्रेमी भी हैं, जो गांधी जी के नियमों को बनाए हुए हैं। "उसके बाद 30 जनवरी, 1948 तक, यानी जब तक गांधी ज़िन्दा रहे, देवीदत्त अपना बोरिया–बिसतरा और कैमरा लेकर गांधीजी के पीछे–पीछे उसी तरह घूमते रहे, जैसे वह अपनी किशोरावस्था से शुरू कर अपनी जवानी के शुरू के दिनों तक घूमे थे। किन्तु बिरला हाऊस में गाधीजी के पार्थिव शरीर का फोटो उनके कैमरा में नहीं है। इसका कारण यह है कि देवीदत्त ने यह कभी नहीं माना कि गाधीजी मर सकते हैं– उसी तरह जैसे बुद्ध कभी नहीं मरता।"[10] राजनीति में पार्टीया बदलने में देर नहीं लगती। देवीदत्त पांच साल गांधीजी के साथ रहकर ऊब गए थे इसलिए उन्होंने कांग्रेस की पार्टी छोड़कर कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हुए– "1924 में भारत में कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना की कार्यवाही में 'सत्यभक्त' का साथ देने के लिए देवीदत्त को एम.एन.रॉय ने भारत भेजा, पर बात कुछ जमी नहीं। उसके बाद कलकत्ते रहकर देवीदत्त अपने गुरू को उनकी प्रतिद्वन्द्वी बनती जा रही ब्रिटिश कम्यूनिस्ट पार्टी की गतिविधियों की रिपोर्ट भेजने का काम करते रहे।"[11]

अलका सरावगी के 'कलिकथा वाया बाईपास' उपन्यास में राजनीति में भ्रष्ट नेताओं की नीति का एक और उदाहरण दृष्टव्य है "इन लोगों को अपना खुद का दिमाग नहीं है, सब बेदी के लोटे है। कभी किसी के पक्ष में बोलते है, कभी किसी के। ऐसे लोग देश की आज़ादी के लिए सबसे बड़ा खतरा है। ब्रिटिश साम्राज्य का विरोध करने वाली कोई भी विचारधारा हो, ये उसी पक्ष में बोलने लगेंगे। कभी गीता से, कभी बाइबिल से। कभी गांधी के पक्ष में, कभी फासीवाद इटली के पक्ष में, तो कभी साम्यवादी रूस के। यह हर पक्ष के और विपक्ष के।"[12] लेखिका ने सरकार की उदारीकरण की भ्रष्ट नीति को भी चित्रित किया है। सन् 1991 में सरकार के आर्थिक नुकसान को दूर करने के लिए सरकार ने उदारीकरण के रूप में आर्थिक निर्माण किया। एक पात्र अपने नौकर से कहता है– "हमारी कंपनी पैरों से चलनेवाले एक पंप किसानों को बहुत कम कीमत पर इसलिए बेचानी चाहती हैं कि हवा में डीजल पंप से जो जहरीली गैसें बनती है, उससे धरती का बहुत नुकसान हो रहा है। देख रहे हो ना इन दिनों कितनी बीमारिया बढ़ रही है। इसलिए हमारी सरकार हमारी कम्पनी को पैसा देगी अगर हम जहरीली गैसों को कम कर देंगे।"[13] इस प्रकार सरकार की उदारीकरण नीति के कारण अमीर और अमीर बनता है और गरीब और गरीब। ऐसी भ्रष्ट राजनीति पर लेखिका उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' में रामा के माध्यम से गहरा व्यंग्य करती है– "दुनिया को तो बचाना ही पडेगा ना सरकार को, नहीं तो हुकुम किस पर चलाएगी? वोट किससे मागेगी?"[14]

मैत्रेयी पुष्पा के 'त्रिया हठ' उपन्यास में मीरा की मामी गाँव के प्रधानपद के चुनाव में मतदाताओं को भोजन एवं अन्य वस्तुओं की रिश्वत देती है। मीरा के माम के मतानुसार परिवार से प्रधानी नहीं जानी चाहिए इसी कारण सब करना पड़ता है।[15] इनमें नेताओं की चरित्रहीन और भ्रष्ट नीति एवं आचरण का समाज में आदर्श के प्रति अविश्वास पैदा होता है।

चित्रा मुद्गल ने अपने कथा साहित्य के माध्यम से भारतीय समाज में व्याप्त राजनैतिक दलों की भ्रष्टता और छल–प्रपंचों का स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत किया है। 'गिलिगडु' उपन्यास में भ्रष्ट नेता जी दलित नारी सुनगुनियां को पार्टी में लाकर उसकी जाति के नाम पर अपनी पार्टी को ज़्यादा मज़बूत करना चाहते हैं। इसके लिए वे हाथ धोकर सुनगुनियां के पीछे पडे हुए हैं। "पार्टी की ताकत बढ़ाने की खातिर पिछड़ों को एकजुट होना ज़रूरी है। ... तभी पिछड़े समाज में मान–शान पा सकेंगे। अपना भविष्य स्वयं गढ़ना होगा। अपनी सरकार दोबारा सत्ता में आनी चाहिए।"[16] 'एक ज़मीन अपनी' उपन्यास में अंकिता के राजनीति के भ्रष्ट रूप को प्रस्तुत किया है। अंकिता राजनीति के भ्रष्ट रूप को उजागर करती हुई कहती है– "जुड़ने से पूर्व ही इस्तेमाल की राजनीति ने लोगों को बंटकर जीना सिखा दिया है..... वह बंटकर जीने को ही अपनी पहचान मानने लगे हैं। यही होता आया है... यही हो रहा है!... पता

नहीं, जनता कब चेतेगी, कब शोषण के विरुद्ध सिर उठाएगी।"[17] 'आवां' नामक उपन्यास में भी राजनीतिक नेताओं की गुंडागर्दी का चित्रण किया गया है। इस उपन्यास में पवार नामक व्यक्ति बताता है कि राजनीति में स्वार्थ से बडा कुछ भी नही है, यहाँ तो संबन्धों का कोई महत्व नहीं। पवार के अनुसार– "राजनीतिज्ञ सत्ता के गलियारे में स्वयं सत्ताधीश होकर शासन करें। किसी अनपढ़, मूर्ख, गंवार, गुंडे को भी वह राजगद्दी पर बैठा, व्यवस्था की बागौंर अपने हाथों में रख उसे अपने संकेतों पर नचा सकता है। नियंता बन शासन करने के इस निराले अंदाज़ का सुख कम आहलादकारी नहीं होता।"[18]

आरक्षण

भारतीय राजनीति में महिला आरक्षण संबंधी मान्यताओं एवं कानून बनाने के संदर्भ में चर्चाएँ हैं। 'त्रिया हठ' उपन्यास में मीरा के मामाजी का विचार है कि महिला आरक्षण होने के कारण ही पत्नी को प्रधानपद के चुनाव में खड़ा किया है। मामाजी पत्नी को आगे कर स्वयं गाँव की राजनीति सँभालना चाहते हैं।[19] मैत्रेयी पुष्पा के 'विजन' उपन्यास की आभा दी महिलाओं को आरक्षण से नहीं बल्कि अपना व्यक्तित्व ही पुरुष की क्षमताओं से परिपूर्ण बनाना आवश्यक मानती है और कहती है कि "अपने देश की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी, ब्रिटेन की मार्गारेट थेंचर, इजराइल की गोल्डा मायर राजनीति में अपना सिक्का जमाने में सफल रही और सिद्ध राजनीतिक पुरुषों पर भारी पड़ी तो अपनी क्षमता और पुरुषों जैसे व्यवहार के कारण।"[20] इस उपन्यास की डॉ. आभा का समाजीकरण के साथ ही विद्रोह दर्शाया है। डॉ. आभा नारी मुक्ति को समाज संरचना के मूल में देखना उचित मानती हैं।

भारत और अमेरिका की राजनीतिक तुलना हिन्दी महिला लेखिकाओं के उपन्यास 'नवाभूम की रसकथा' और 'मैंने नाता तोड़ा' उपन्यास में की है। 'मैंने नाता तोड़ा' उपन्यास में अमेरिका की चकाचौंध और विकास के साथ तुलना की है। सुषम बेदी का 'नवाभूम की रसकथा' उपन्यास के आदित्य दोनों देश के चुनावी राजनीति की तुलना करते हैं– "प्रजातंत्र बहुमत पर आधारित और समानाधिकारों पर आधारित। अमरिका में अभी तक बहुमत वाला प्रजातंत्र ही चल रहा है। भारत में जब बहुमत की बात होती है तो वह भारतीय जनता पार्टी का हिंदू राष्ट्र बन जाता है और समानाधिकारों की बात पर जोर देते हैं तो मंडल कमीशन जिसका दूसरे बहुसंख्यक लोगों द्वारा विरोध होने लगता है।"[21] इसमें प्रजातंत्र में जटिलता भारत के लिए समस्याएँ बनी हैं। इसमें चुनाव और राज्यों के अंतर्गत संबंधों पर अधिक प्रभाव है।

राजनेताओं का राजनीतिक दृष्टिकोण

चाक उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने अतरपुर की ग्राम राजनीति को उजागर किया है। यहाँ के राजनेता स्वार्थ सिद्धि में लिप्त दिखाई देते है। विकास कार्य को प्राथमिकता न देकर स्वार्थ सिद्धि में तत्पर दिखाई देते है। चाक उपन्यास में ग्राम राजनीति का यथार्थ चित्रण हुआ है। इस गाँव के नेता आपस में लडते–झगडते दिखाई देते है। प्रस्तुत उपन्यास में नारी में आयी राजनीतिक चेतना को भी स्पष्ट किया है। अतरपुर गाँव के राजनीति में अनुशासनहीनता, आराजकता, जातिवाद, राजनेताओं की अवसरवादी दृष्टि और उनका चारित्रिक पतन दृष्टिगोचर होता है। "मैत्रेयी जी ने आलोच्य उपन्यास में अतरपुर गाँव का सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिदृश्य प्रस्तुत करके वर्तमान नारी जीवन की यथार्थता को वास्तविक रूप देने का प्रयत्न किया है।"[22]

समाज में राजनेताओं का प्रभाव आशा एवं विश्वास पर आधारित होता है। अल्का सरावगी का 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में के.वी. शंकर अय्यर काँग्रेस दल के नेताओं से प्रभावित है। के.वी. काँग्रेस के नेताओं के बारे में कहते हैं, "मनमोहन सिंह से बेहतर प्राइम मिनिस्टर कहाँ मिलता इंडिया को? इकोनोमिक्स का प्रोफेसर, वर्ल्ड बैंक में काम का अनुभव, देश की जरुरतों को वही नहीं जानेगा तो और कौन जानेगा।"[23] के.वी. आधुनिक तकनीकि एवं बाजारवाद को बढ़ावा देने वाले नेताओं से प्रभावित हैं।

चित्रा मुदगल के उपन्यास आवाँ में बिमला बेन को नाटकबाज राजनेता के रूप में चित्रित किया है। नमिता बिमला बेन के संदर्भ में कहती है कि "सच पुछों तो मुझे विमला बेन जैसी नाटकबाज स्त्रियों की बनस्बित किशोरी बाई जैसी सुदृढ स्त्रियां प्रभावित करती है। तुम्हें नहीं लगता कि विमलाबेन की प्रत्येक पहल चेतना निरूपित करने की आड में स्वयं को नायिका बनाकर वाहवाही लूटने की नौटंकी होती है।"[24] प्रस्तुत उपन्यास की विमला बेन ऐसी राजनेता है, जिसमें झूठ, बेईमानी, अवसरवाद, स्वार्थ सिद्धि जैसे गुण पाये जाते है, जो कुछ अवसरवादी नेताओं में दृष्टिगोचर होते है। इसी उपन्यास में ट्रेड युनियनों की राजनीति पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत उपन्यास में ईर्ष्याग्रस्त राजनीति को भी प्रस्तुत किया है। आवाँ उपन्यास में देवी शंकर पांडेय एवं अन्ना साहब की हत्या का परिदृश्य उपस्थित करते हुए, अन्तिम दशक में अपराधिकरण की राजनीति को उजागर किया है।[25] इन दशकों के बहुत सारे उपन्यासों में आतंकवाद, नक्सलवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद को उजागर करने का प्रयास किया है।

चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में श्रमिकों की दुर्दशा का यथार्थ वर्णन है। 'गिलिगडु' उपन्यास में नेता रामखिलावन यादव निम्न वर्गीय सुनगुनियां को तरह–तरह के प्रलोभन देते हैं। दलितों के उद्धार का प्रपंच रचकर वे अपनी कुर्सी के लिए वोट बटोरने की तैयारी करते हैं। वह सुनगुनियां से कहते हैं कि "सुनगुनिया उनकी पार्टी में आ जाये। बहुत जल्दी प्रदेश में चुनाव घोषित होने जा रहे। पार्टी की ताकत बढ़ाने की खातिर पिछड़ों को एक जुट होना जरूरी है। उन्हें मिल जुल कर बामन–ठाकुरों का तख्ता पलटना होगा। तभी पिछड़े समाज में मान–शान पा सकेंगे। अपना भविष्य स्वयं गढ़ना होगा। अपनी सरकार दोबारा सत्ता में आनी चाहिए।''[26] अंतिम वाक्य यह स्पष्ट करता है कि अपनी जाति की सरकार बनाने के लिए नेता जी बामन–ठाकुरों का तख्ता पलटना चाहते हैं न कि दलित उद्धार के लिए। "एक जमीन अपनी' में भी हरीन्द्र समाज पर हावी होती राजनीति के विषय में कहता है कि "आज की कोई भी सामाजिक समस्या सामाजिक न होकर राजनीतिक हो गयी है. ...तुम्हें नहीं लगता, वोट की राजनीति पूरे षडयंत्र के साथ रूढ़ियों, संकीर्णताओं, परम्पराओं और धर्मांधता को समुदायगत विशेषता और धर्म–निरपेक्षता की आड़ में अक्सर और आवश्यकतानुसार उसकी रक्षक बनने का ढोंग रचकर अपना उल्लू सीधा कर रही है।"[27]

राजनीतिक नेताओं में अपराधीकरण बढ़ रहा है। इसी कारण समाज में नेताओं के प्रति नकारात्मक भावनाएँ और नैराश्य वातावरण निर्माण हुआ है। वर्तमान स्थिति में चुनाव जीतने वाले पंच से लेकर सांसद तक का क्षेत्र अपराधियों ने व्याप्त किया है। 'काहे री नलिनी' उपन्यास में पुलिस अफसर नंदिता वेश्या व्यवसाय में नाबालिग लड़कियों को धकेलने वाले जीवनदास और जरीना का परिदृश्य दिखाया गया है।[28] मैत्रेयी पुष्पा के 'विजन' उपन्यास की डॉ. नेहा राजनीतिक व्यवस्था के खिलाफ लड़ना चाहती है क्योंकि वह चिकित्सा क्षेत्र की धांधलियों पर नेताओं को सजग एवं जागृत करना चाहती है।[29]

कृष्णा सोबती के उपन्यास 'दिलो दानिश' में एक राजनीतिक राजनेता संयुक्त परिवार को दिखाया है। महानगर दिल्ली के वातावरण में सामन्ती सम्यता का यथार्थ साकार हो उठा है। संयुक्त परिवार में पत्नी की सारी हैसियत प्राप्त होने पर भी नारी को पति के विवाहेतर संबध की शिकायत करने का अधिकार नहीं है। क्योंकि समाज उसमें कोई गलती

नहीं दीखता है और कमाने वाले पुरुष के ऐसे कामों को स्वीकृति भी देता है। वकील साहिब कहता है "हाँ, बाबाजी बहुत कुछ सिखा गए। जो कायदा उनका था वही हमें अपनाना था। किस्सा कोताह इतना ही कि बड़े मुकद्दमों की कमाई बीवी के हाथ और छोटे मोटे की खुशानुमाई घर के बाहर।"[30]

निष्कर्ष

अतः विवेचित लेखिकाओं ने भारतीय राजनीति के विकृष्ट रूप को निर्भयतापूर्वक अपनी कथाकृतियों में उभारा है। लोकतंत्र शासन–प्रणाली में पूंजीवाद, षड्यंत्र और सामान्य जन का शोषण, नेताओं का सत्ता के प्रति लोभ आदि का करारा व्यंग्य किया गया है। देश के कर्णधार नेता एवं मंत्री भी कर्त्तव्यनिष्ठा से पदभार को न संभालकार जनहित के स्थान पर व्यक्ति–हित को ही महत्व दे रहे है, जिससे सर्वत्र खोखलापन आता जा रहा है और राजनीतिक माहौल बिल्कुल दुषित होता जा रहा है। प्रस्तुत उपन्यासों में राजनीतिक जीवन में भ्रष्टाचार, आरक्षण, सत्ता पाने के लिए चुनाव में रिश्वत, नेताओं के चरित्र हनन और गुंडागर्दी की सहायता करना आदि का भी यथार्थ चित्रण अधोरेखित किया गया है।

संदर्भ सूची

1 गोपालराय – हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, 2002, पृ. 438
2 मैत्रेयी पुष्पा – इदन्नमम, पृ. 304
3 मैत्रेयी पुष्पा – कही ईसुरी फाग, पृ. 242
4 अल्का सरावगी – कलिकथाः वाया बाईपास, पृ. 112
5 अल्का सरावगी – कोई बात नहीं, पृ. 75
6 बी.एल. ग्रोवर – आधुनिक भारत का इतिहास, पृ. 468
7 अल्का सरावगी – कलिकथाः वाया बाईपास, पृ. 164
8 उषा यादव – कथांतर, किरण प्रकाशन, 2004, पृ. 22
9 अलका सरावगी – कोई बात नहीं, राजकमल प्रकाशन, 2004, पृ. 165
10 अलका सरावगी – शेष कादंबरी, पृ. 173
11 वही, पृ. 98
12 अलका सरावगी – कलिकथाः वाया बाईपास, पृ. 97
13 अलका सरावगी – एक ब्रेक के बाद, पृ. 148
14 वही, पृ. 149
15 मैत्रेयी पुष्पा – त्रिया हठ, किताबघर प्रकाशन, 2006, पृ. 84
16 चित्रा मुदगल – गिलीगडू, पृ. 50
17 वही, पृ. 107
18 चित्रा मुदगल – आँवा, पृ. 158
19 वही, पृ. 148
20 मैत्रेयी पुष्पा – विजन, वाणी प्रकाशन, 2002, पृ. 47
21 सुषम बेदी – नवाभूम की रसकथा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2002, पृ. 38

22 वसाणी कृष्णावंती पी – दसवें दशक के महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारी चेतना, पृ. 72
23 अल्का सरावगी – एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, 2008, पृ. 19
24 चित्रा मुदगल – आँवा, पृ. 158
25 चित्रा मुदगल – आँवा, पृ. 201
26 चित्रा मुदगल – गिलिगडु, पृ. 82
27 चित्रा मुदगल – एक जमीन अपनी, पृ. 82
28 उषा यादव – काहे री नलिनी, सत्साहित्य प्रकाशन, 2008, पृ. 123
29 मैत्रेयी पुष्पा – विजन, वाणी प्रकाशन, 2002, पृ. 85
30 कृष्णा सोबती – दिलो दानिश, राजकमल प्रकाशन, 1993, पृ. 135